Research Paper

Volume : 2 | Issue : 10 | October 2013 • ISSN No 2277 - 8179

समकालीन नाटको में सामाजिक चेतना
Samkalin Natako Me Samajik Chetna

Literature

KEYWORDS : समकालीन नाटको में सामाजिक चेतना

श्रीलाल षुक्ल

प्रस्तावना– नाटक यह विधा रंगमंचीय विधा है। अर्थात दृष्य, दृष्य–श्रव्य, श्रव्य के साथ साथ नाटक को पढ़ा भी जा सकता है। इसी कारण यह विधा अन्य विधाओं की तुलना में अलग और उनमें विषिश्ट भी है। साहित्य संबंध व्यक्ति और राश्ट्रीय जीवन से है। और नाटक में जादा पैमाने पर सामान्य व्यक्तियों की जीवन पध्दतीयों अत्याचारों, राजनितिक समस्याओ, ऐतिहासिकता आदि अनेक बातो पर प्रकाष डाला जाता है। साहित्यकार जो कुछ लिखता है वह षून्य मे नही । तो जगत की परिस्थितियों से प्रभावित हुए बिना वह स्वयं जगत का ही एक अंग है। साहित्य सर्जक एवं जीवन के पारपांरिक संबंधो को लेकर व्यक्त किये गये डॉ. संपूर्णानंद के यह षब्द ''एक सार्वभौमिक, सार्वकालिक और षाष्वत सत्य का उद्घाटन करते है। कौनसा भी साहित्यकार अपने परिवेष को नकार नहीं सकता, क्योंकि वह जिस परिवेष में जीता है वही परिवेष उसकी सर्वजना का प्रेरक होता है।''1

प्रत्येक युग में सामाजिक जीवन में विविधता के दर्षन होते है। साठोत्तरी नाटकारों ने भी समाज के अनेक पहलूओं को अपने नाटकों में प्रयुक्त करने का प्रयास किया है। इन नाटकों में आज के आदमी की जीवन जिने के प्रति जीने का संघर्ष, इच्छा–आकांक्षाओं को लेकर जीता इन्सान, भ्रश्टाचार, आधुनिक षिक्षा, पध्दति, दहेज के प्रति जागृक युवक, पारिवारिक संबंध, दाम्पत्य जीवन, नारी के विविध रुप, श्रमजीवी समाज की स्थिति, षोशण के विविध रुप, किसानों की स्थिति, जाति प्रथा आदि सभी ऐसे अनेक विशयों का आकलन किया है।

मानव एक सामाजिक प्राणी है। और यह समाज परिवर्तनषील है। इसके साथ साथ साहित्य में भी मानव की तरह परिवर्तन आता है। क्योंकि साहित्य मानव के जीवन से जूडा है। समाज में घटित घटनाओं का चित्रण साहित्य में होता है जिसमें उपन्यास, कविता, नाटक, एकांकी, कहानी, निबंध आदि विधाओं के माध्यमसे व्यक्त होता है परंतु समाज का यथार्थ चित्रण नाटक में ही दिखाई देता है। क्योंकि नाटक दृष्य और श्रव्य और होता है। समाज का नाटक से घनिश्ट संबंध है। नाटककार अपनी रचना के माध्यम से व्यक्ति और समाज में चेतना जागृत करता है। रामजन्म षर्मा इसके बारे में लिखते है की–

''प्रत्येक युगीन साहित्य में तत्कालीन समाज की छाया रहती है। नाटक की समग्र रुप में साहित्य की एक ऐसी विधा है समाज को पूर्ण रुपेण प्रभावित करती है। इसीलिए अन्य विभिन्न साहित्यरुपों के रहते हुए भी नाटक को विषेश आग्रहपूर्वक अपनाते हुए पंचमदेव कहा गया है। नाटक के द्वारा मानव जीवन को षक्ति और गति प्राप्त होती है। सामूहिक प्रतिक्रिया और प्रेरणा के साथ ही जीवन के हर पहलू को अभिनेय नाटक प्रभावित करते है।''2

स्वतंत्रता के पूर्व जो साहित्य लिखा गया उसका उद्देष देषवासियों में राश्ट्रीय भावना जागृत करना था। स्वतंत्रता के बाद इन साहित्यिक विधाओं में अमूलाग्र क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ है। इस में सामाजिक नाटकों का सृजन हुआ। जिसमें निर्धनता षिक्षा समस्या और नैतिक मूल्यों का विरोध कथावस्तु का आधार बना है। उच्च मध्यम वर्ग एवं निम्न मध्यमवर्गीय परिवारों की यथार्थ स्थिति का चित्रण नाटकों में सफलता के साथ किया गया है।

1) समाजिक चेतना के संदर्भ में –
षुरुवात से देखे तो इस समाज में बहुत परिवर्तन आया है। इस समाज व्यवस्था को आर्यों के काल से वर्णव्यवस्था के आधार पर बनाया गया है। इसे चार वर्णो में अर्थात–ब्रम्हण, क्षत्रिय, वैष्य आरै षुद्र। इन वर्णो के गुणानुसार जाना जाता था। और इन में कार्यो का भी विभाजन किया गया। ब्राम्हण ज्ञान देने का कार्य क्षत्रिय समाज की रक्षा का, वैष्य समाज की आवष्यक वस्तु अर्थात व्यापार का कार्य और षुद्र गन्दगी समाजसे साफ करने का कार्य करते थे। इन चार वर्णो को जॉति– पॉति में बाटा गया है। खान–पान, षादी–विवाह, पेषे आदि अपनी ही जाति में होने लगे और समाज में ऊॅच–नीच की भावना फैलने लगी। आधुनिक षिक्षा दिक्षा ने इस जाति व्यवस्था को ठेस पहुँचाई और जाति व्यवस्था का आधार स्तंभ लड़खड़ा गया। आज जात–पात को नही माना जाता और इस के कारण आंतर्जातीय विवाह होने लगे है। इस विचार धारा का प्रभाव युगीन नाटकारों पर भी पड़ा और परिणाम स्वरुप यह चित्रण नाटकों में उभर कर आने लगा।''3

पुराने और प्राचीन नाटको में नायक–नायिका के रुप में देवता अथवा उच्चवर्ग या क्षत्रिय हुआ करते थे। मगर आज निम्नवर्ग के पात्रों को भी नायक नायिका के रुप में लिया जाता है। इस भेद को मिटाने के लिए सरकार भी जागृत हो रही है।

2) विवाह :–
समाज व्यवस्था तथा सामाजिक जीवन को सुव्यवस्थित रखने के लिए विवाह महत्त्वपूर्ण है। प्राचीन समय में माता–पिता अपनी संतान का विवाह करते थे। परंतु आज यह व्यवस्था परिवर्तीत हो गई है। आज स्वयं कई स्थानोंपर लड़का–लड़की अपना विवाह खुद तय करते है। खुद की मनमानी से अपनी जिंदगी व्यतित करते है इसका परिणाम विपरित होता है, कोई किसी की बात सुनने के अधिन नही होता क्योंकि इन शादी ब्याह या प्रेमविवाह में दोनो समान के हकदार होते है इसलिए इसका विपरीत परिणाम दिखायी देता है बहुतसी लडकियॉ अपना घरबार छोडके आती है इसलिए उनको न मैके का सहारा होता है, ना ससुराल का । इसका परिणाम वेष्या समस्या में होता है।

3) वेष्या समस्या :–
जब स्त्री–पुरुश में अविष्वास के कारण अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा है। प्राचीन काल में राजा महाराजा भी वासनापूर्ति के लिए अनेक स्त्रियाँ रखते थे। आज भी यह वेष्या समस्या दिखाई देती है। इसके लिए कोई एक व्यक्ति जिम्मेदार नहीं है। बल्कि समाज जिम्मेदार है। इस कारण दाम्पत्य जीवन में बाधा आती है और अनेक संसार बरबाद होते है। इससे माता–पिता से संतान बिछड्ड जाती है। अनेक दुशपरिणाम होते है। इसके कई कारण होते है।

4) दहेज समस्या :–
हर माँ–बाप को अपनी बेटी के लिए अच्छा घर अच्छा लड़का समाज में स्थान चाहिए। इसके लिए वह मुहँ माँगा दहेज देते है। यह स्थिति कुछ अभी की नही। षुरुआत से यह प्रथा चली आ रही। आधुनिक काल में इस समस्या ने चारों तरफ अपना साम्राज्य फैला दिया है। दहेज प्रथा का विरोध करते हुए महात्मा गांधीजी कहते है, ''अगर इस बुराई को जड़ से मिटाना है तो युवक–युवतियों या उनके माँ–बाप को जाति का बंधन तोड़ना होगा। षादी की उम्र भी बढ़ानी पड़ेगी और जरुरत हुई, यानी योग्य वर न मिला तो लड़कियों को कुवारी रहने का साहस करना पडेगा।''4 दहेजप्रथा को समाप्त करने के लिए अनेक संघटन इकठ्ठा होकर तीव्र विरोध कर रहे है। जहॉ कही भी यह दहेजप्रथा की समस्या आती है वहॉपर यह संघटन षीघ्रतासे पहुँचकर मद्द करता है।

5. मद्यपान की समस्याः–
डॉ. लाजपतराय गुप्त का कहना है ''समाज में मदिरापान की एक भयंकर समस्या है। जिस व्यक्ति को इसकी आदत पड जाती है, सारा जीवन उसी में नश्ट हो जाता है। मदिरा से षरीर पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। इस युग में मद्यपान की समस्या की और कुछ नाटकारों का ध्यान आकर्शित हुआ और उन्होंने अपने नाटकों में इसके विरोध में प्रचार किया।''5 षराबी खुद अपनी ही नहीं सारे परिवार की इज्जत धूल में मिला देता है। इस समस्या को दूर करने में स्त्रियाँ भी काफी योदान दे सकती है।

6. स्त्री–पुरुश संबंध :–
प्रारम्भ से ही पुरुश स्त्री को दासी बनाकर या गुलाम बनाकर रखता है। स्त्रियों की जगह घर की चार दीवारों में है। इसके दो कारण माने जा सकते है। पहला कारण हमारी पुरुश प्रधान समाज व्यवस्था और दूसरा कारण स्त्री षिक्षा क्योंकि आज तक स्त्रियों को षिक्षा देना धर्म के विरुद्ध माना जाता था। आधुनिक युग में प्रतिदिन मँहगाई बढ़ती जा रही है। स्त्री–पुरुश, पति–पत्नी दोनों का आर्थिक उपार्जन करना आवष्यक हो गया है। अर्थाजन करने से स्त्रियों मे अभिमान सा आ गया है। अपने पति को वह तुच्छ समझने लगी है। इस कारण अनेक समस्याएँ सामने आ रही है।

7. संयुक्त परिवार विघटन :–
प्राचीन काल में संयुक्त परिवार का सभी गुणगान करते थे। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना सारे जगत में फैल जाये ऐसा सब मानते थे। लेकिन आधुनिक युग में संयुक्त परिवार का आदर्ष बुजुर्गो और संयुक्त परिवार चलना काफी मुष्किल नजर आ रहा है। इसलिए परिवार विघटित हो रहा है। इससे परिवार में आपस की दुरीयॉ बढ रही है। ''हम दो हमारे दो'' इस नारे का गलत मतलब निकाला जा रहा है, और इसका परिवर्तन विघटित परिवार में दिखायी देता है।

समारोप :– इस प्रकार समकालीन नाटको में सामाजिक चेतना को स्वरुप पर चिंतन मिलता है। समकालीन नाटकों में यह सामाजिक चेतना हर घरमें, हर स्थान पर, हर गॉवमें, हर नगरमें, हर महानगरमें चित्रित दिखायी देता है। जिसमें वर्णव्यवस्था, विवाह, वेष्यासमस्या, स्त्री–पुरुश संबंध, संयुक्त परिवार विघटन आदि का विघटन दिखायी देता है।

REFERENCE

1) स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक – डॉ. राजजन्म षर्मा, पृ. सं. –5 द्य 2) बीसवी षताब्दी की हिन्दी नाटको का समाजषास्त्रीय अध्ययन – द्य डॉ. लाजपतराय गुप्त, पृ. सं. –15 द्य 3) बीसवी षताब्दी की हिन्दी नाटको का समाजषास्त्रीय अध्ययन – द्य डॉ. लाजपतराय गुप्त, पृ.सं.– 24 द्य 4) स्त्रियाँ और उनकी समस्याये – महात्मा गाँधीजी द्य 5) स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक का समाजषास्त्रीय अध्ययन – द्य डॉ. राजजन्म षर्मा, पृ. सं. –10 द्य 6) समकालीन हिंदी नाटक– डॉ. जयवंत भाई डी. पंड्या, पृ.संख्या – 47 द्य 7) समकालीन हिन्दी नाटकों में नारी के विविध रुप – डॉ. आसाराम बेवले द्य. द्य 8) रुपायन (समकालीन हिंदी नाटक तथा रंगमंचःभारतीयता के संदर्भ में) द्य